ज्ञान का गूढ़ रहस्य

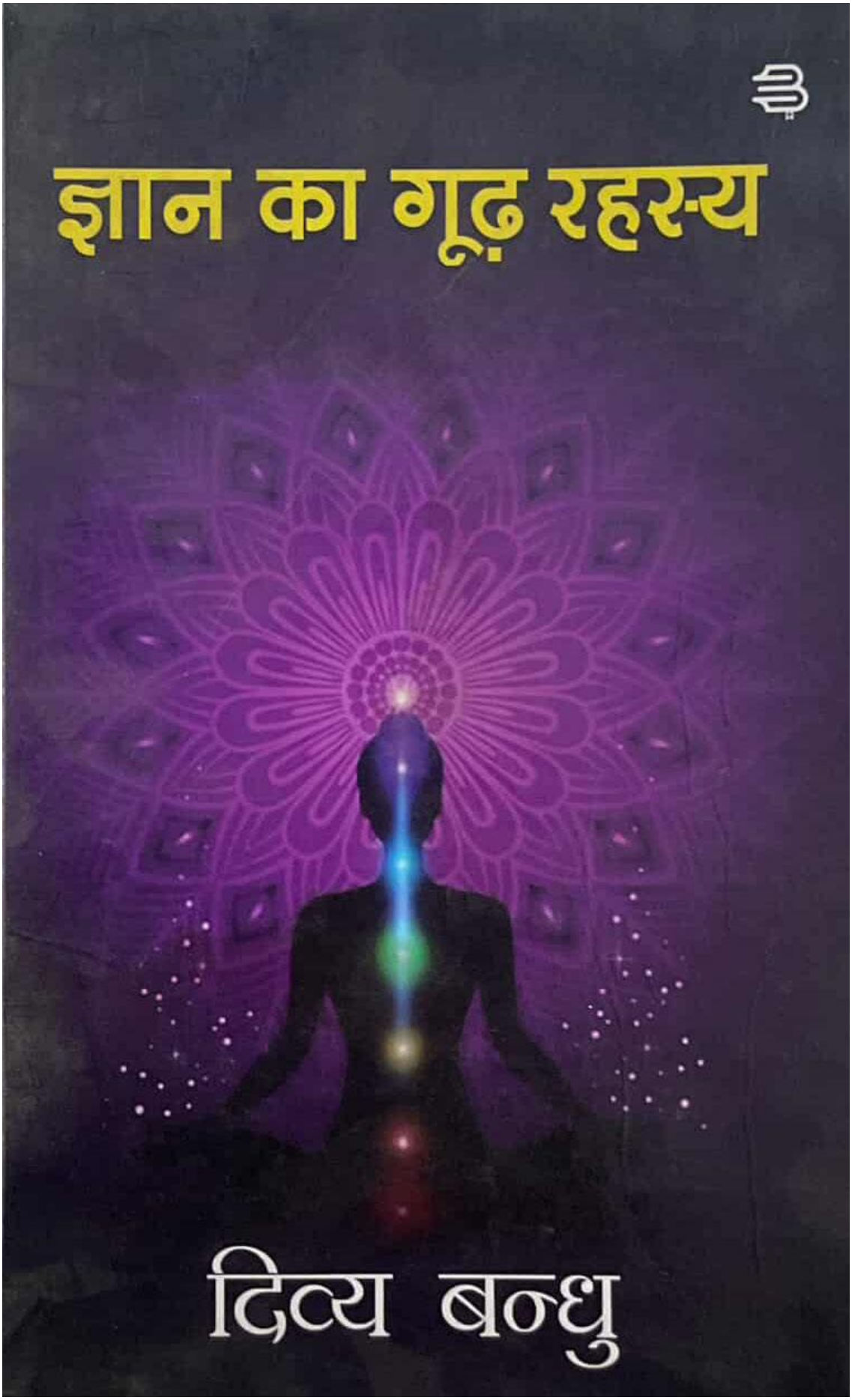

दिव्य बन्धु

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय सूची	पृष्ठ
1.	काम–क्रोध–लोभ कैसे व्यक्ति का पतन करते हैं।	1
2.	स्थिर के साथ अस्थिर का कोई सम्बन्ध नहीं है।	2
3.	धन सम्पत्ति के बढ़ने से मैं का महत्व बढ़ता नहीं बल्कि संकीर्ण होता है।	3
4.	मन के साथ बुद्धि को भी स्थिर करना आवश्यक है।	4
5.	विरक्ति, वैराग्य और वैराग्य का ज्ञान लाभ।	5
6.	आत्मज्ञान के अलावा सभी ज्ञान मोह हैं।	6
7.	जिसका त्याग करना है उसका ज्ञान आवश्यक है।	7
8.	कर्म योग, ज्ञान योग, एवं भक्ति योग का व्यवहार।	8
9.	गुरू में व्यक्ति बुद्धि (गुरू एक शरीरधारी) रखने से आत्मोन्नति रूद्व होती है।	9
10.	विपरीत वस्तुओं के द्वन्द एवं समन्वय से जगत संचालित है।	10
11.	निर्भरता के अलावा कोई उपाय नहीं है।	11
12.	''मैं'' और ''मेरा'' से सम्बन्धित गूढ़ तथ्य।	12
13.	ग्रहण एवं त्याग का समन्वय होना चाहिए।	13
14.	ईश्वर का अवस्थान एवं उसका परिचय।	14
15.	आत्मज्ञान लाभ के उपाय और उसमें आने वाली बाधा।	16
16.	साधना और सिद्धिलाभ की गति और स्थिति विद्या।	17
17.	कर्म, ज्ञान, भक्ति एक दूसरे के परिपूरक हैं।	19
18.	मन के अवस्थान/स्थिति के अनुसार जीवन प्रवाह चलता है।	20
19.	सत्य और मिथ्या का अवस्थान और उसका स्वरूप।	21
20.	सुख–दुःख का रहस्य और समाधान।	22
21.	सत्य लाभ न होने का कारण।	23
22.	वैराग्य एवं अभ्यास का विषेश मूल्यांकन।	25
23.	सत्य के सम्बन्ध में महापुरूशों के मौलिक सूत्र।	27
24.	सत्य पथ की सार्थकता एवं सतर्कता।	31
25.	साधारण साधक तथा सिद्ध में मैं का भिन्न–भिन्न अवस्थान/स्तर।	32
26.	केवल वाह्य विद्या ही नहीं अन्तर विद्या में भी शिक्षित होना होगा।	33

27. साधारण, साधक और सिद्ध के भेद से सुख तीन प्रकार के होते हैं। 34
28. यथार्थ सुख का दर्शन। 35
29. अनुभूति नहीं स्थिति लाभ ही साधक का मूल लक्ष्य होना चाहिए। 36
30. उद्देश्य को स्थिर करके दीक्षा लेनी चाहिए। 37
31. गुरू करने का उद्देश्य। 38
32. पूजा किसकी की जाती है? पूजा का रहस्य क्या है? 39
33. चिन्ता को नहीं पहचानने से साधन जीवन वृथा होता है। 40
34. प्रत्यक्ष रूप से सत्य के समक्ष होने का उपाय। 41
35. सत्य के पथ में वाह्य एवं अन्तर की बाधायें। 42
36. अन्तर में चार युगों का अवस्थान। 43
37. किसी के समझने/सीखने की इच्छा न रहने से कोई किसी को समझा या सिखा नहीं सकता। 44
38. निर्विषय जाग्रत ज्ञान ही ब्रह्म ज्ञान है। 45
39. त्याग और भोग मिथ्या व्यवहार है। 46
40. ब्रह्म ज्ञान और जगत की वास्तविकता। 47
41. ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति। 48
42. सत्य रूप से सत्य लाभ कैसे होता है? 49
43. विज्ञान का चैतन्य लाभ। 50
44. सत्य का आवरण एवं उन्मोचन। 51
45. सत्य और मिथ्या। 52
46. सत्य का प्रत्यक्ष न होना। 53
47. सत्य की खोज में बुद्ध देव। 54
48. चैतन्य लाभ के पथ में चेतना का क्रम स्तर। 55
49. आपेक्षिक सत्य के पीछे का यथार्थ सत्य/वास्तव क्या है? 57
50. आपेक्षिक वाद/वाह्य वाद। 58
51. वाह्य सत्य–मिथ्या के उर्ध्व में सत्य का अवस्थान। 59
52. जगत में सत्य को मानना कठिन है। 60
53. वास्तविक और सत्य का समन्वय कहाँ है? 61
54. तीन गुणों का आन्तरिक रहस्य। 62
55. आसक्ति एवं अहंकार नहीं छोड़ने पर भगवत् एवं भगवान के लाभ का अधिकार नहीं। 63

56. चेतना के भिन्न–भिन्न स्तरों का भेद किये बिना पूर्ण ज्ञान नहीं होता है। 64
57. व्यक्ति का अस्तित्व ईश्वर तथा उसका स्पन्दन जीव/जगत हैं। 65
58. ज्ञान मार्ग में "मैं" तत्व तथा भक्ति मार्ग में "तुम" तत्व की साधना। 67
59. ईश्वर जिसके समक्ष अपने को जितना प्रकट करते हैं, वह उतना ही जानता है। 68
60. ईश्वर लाभ तथा उसके साथ प्रेम ही साधन जीवन का मूल उद्देश्य होना चाहिए। 69
61. साधक के अन्दर आसक्ति एवं अहंकार रहने से साधन जीवन वृथा हो जाता है। 70
62. जितने मत उतने पथ–जिसको लेकर मतभेद हैं? 71
63. "अहंकार" ही हम लोगों के आन्तरिक गुरू का रूप धारण कर हमारा परिचालन कर रहा है। 72
64. हम कब भगवान श्रीकृष्ण की संगनी राधा का भाव प्राप्त करेगें। 73
65. केवल जीवन में वैराग्य को लेकर ही नहीं बल्कि जीवन व्यवहार करते हुये भी सत्य को जानना होगा। 74
66. "अहंकार और आसक्ति" ही आवरण और विक्षेप का मूल कारण है। 75
67. आत्मज्ञान लाभ का उपाय। 76
68. सभी प्राणधारी/जीव भगवान के हैं। कुछ भी मेरा नहीं है। 77
69. जगत सत्य यह निश्चय करने से पूर्व सत्य क्या है? इसकी जानकारी अवश्य होना चाहिए। 78
70. "मैं" स्वरूप के ज्ञान में त्याग और भोग बन्धन स्वरूप है। 79
71. असीम तथा ससीम में से किसी एक को छोड़ने पर पूर्णाअवस्था नहीं होती है। 80
72. ध्यान समाधि का उद्देश्य एवं इसकी सीमा को समझना आवश्यक है। 81
73. पूजा एवं पुजारी का ज्ञान न रहने पर पूजा करना वृथा होता है। 82
74. सद्गुरू को पहचानने का उपाय। 83
75. हम लोगों का मन इतना अस्थिर क्यों हैं? 84

76. भगवान का भिन्न–भिन्न रूपों में आस्वादन करना। 85
77. आत्मा ही शरीर को धारण करती है तथा शरीर निर्वहन का दायित्व आत्मा का है। 86
78. ब्रह्मज्ञान का परिचय एवं उसकी प्राप्ति। 87
79. सृष्टि के नियम अनुसार ही वाह्य जगत में रहना होगा। 88
80. विवर्तन वाद के ऊपर पुर्नजन्मवाद नियमित होता है। 89
81. जगत के सृश्टा ने अपने को विभिन्न प्रकार से आस्वादन करने हेतु ही सृष्टि में विविधता लायी है। 90
82. मिथ्या को धारण करते हुये सत्य को नहीं जाना जा सक 91
83. परमाणु विस्फोट पद्धति के अनुसार ही चेतना में भी विस्फोट होता है। 92
84. आध्यात्मिक पतन का आन्तरिक अर्थ। 93
85. षड्रिपुओं और अष्टपाश को जय न करने से आध्यात्मिक जीवन वृथा हो जाता है। 94
86. हमें जगत जिस रूप में दिखाई दे रहा है वैसा नहीं है। 95
87. सभी चेतना का खेल है, इसको छोड़कर कुछ भी नहीं है। 96
88. चतुराश्रम छोड़कर हमें अत्याश्रमी होना होगा। 97
89. जीवन के प्रतिष्ठा के पीछे कितने रहस्य छुपे हुये हैं। 98
90. ज्ञान/आत्मबोध में रहते हुये बुद्धि एवं वास्तविक अनुभूतियों को देखते हुये जीवन में चलना होगा। 99
91. दुःख को पहचान लेने से दुःख हट जाता है। 100
92. हमें ज्ञानगंज और सिद्धाश्रम में पुनः प्रतिष्ठा प्राप्त करनी पड़ेगी। 101
93. शरीर के लिए व्यायाम, मन के लिए ध्यान, आत्मा के लिए ज्ञान तथा परमात्मा को प्रेम चाहिए। 102
94. आध्यात्म में अग्रगति/प्रगति के परिमाप का उपाय। 103
95. साधन जीवन का मूल उद्देश्य तथा अवस्थान क्या होगा? 104
96. सिद्धिलाभ का परिचय एवं क्रमोन्नति। 105
97. ज्ञान के स्वरूप को जाने बिना ज्ञान का अभाव नहीं मिटता। 106
98. वैज्ञानिकों को भी विश्वास करके आगे बढ़ना होता है। 107

99. अपने समझ के अनुसार दूसरों को समझने का प्रयास कर हम गलती करते हैं। 108
100. व्यक्ति में प्राण–प्रतिष्ठा होने पर अखण्ड ज्ञान लाभ होता है। 109
101. क्रियायोग की अन्तर बात। 110
102. योग के दशों अंगों की पहचान एवं उनकी प्राप्ति। 111
103. भगवान को प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करने का आन्तरिक अर्थ। 112
104. चिन्तामुक्त चेतना का लाभ होने पर हम ईश्वर का जीवान्त विग्रह बन जाते हैं। 113
105. अतीत का कर्मफल तथा वर्तमान का सिद्धान्त दोनों भाग्य बनाते हैं। 114
106 दूसरों के प्रति विद्वेष दूसरों को नहीं स्वयं को भोगना पड़ता है। 115
107 हमारे बन्धन का मूल कारण संसार न होकर हमारे संस्कार हैं। 116
108 तपस्या स्वाध्याय तथा ईश्वर प्राणिधान क्रिया योग की अन्तर्वात है 117
109 ईश्वर में प्रविष्ट होने की क्रमधारा। 118
110. स्वयं (आत्मा) को जाने बिना हम स्वयं से नहीं मिल सकते। 119
111. हम आध्यात्म के किस स्तर में है? इसे समझना होगा। 120
112. युक्ति/तर्क का त्याग कर हमें अन्तर से युक्त होने की प्रचेष्टा करनी चाहिए। 121
113. अपनी चाह अनुसार प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर का आस्वादन अलग–अलग तरह से करता है। 122
114. वेद के पाण्डित्य से कभी भी ब्रह्मज्ञान नहीं होता है। 123
115. हर व्यक्ति स्वयं एक जीवन्त विग्रह है। 124
116. भगवान अप्रत्यक्ष न होकर प्रत्यक्ष प्रमाणित है। 125
117. आत्मज्ञान हेतु शब्द की साधना एवं नियम को जानना आवष्यक है। 126
118. कर्म के अनुसार ज्ञान लाभ होता है। 127
119. सत्य के पथ में शून्यता एवं पूर्णता का रहस्य। 128
120. अनुभूति में अद्वैत ज्ञान। 129
121. अद्वैत ज्ञान ही आत्मज्ञान है। 130
122. अद्वैत ज्ञान के अभाव में बन्धन नहीं छूटता। 131

123. अद्वैत ज्ञान का अद्वैत स्तर। 132
124. ज्ञान के पथ में अद्वैत ज्ञान। 133
125. अखण्ड बोध में अद्वैत ज्ञान। 134
126. अद्वैत बोध में विश्व ज्ञान। 135
127. ज्ञान और प्रेम की दृष्टि में अद्वैत ज्ञान। 136
128. हर व्यक्ति अपने अवस्थान में रहना चाहता है। 137
129. त्याग से शान्ति लाभ एवं भोग (आत्मा, परमात्मा का एकत्व) से आनन्द लाभ होता है। 138
130. बुद्धि योग तथा बुद्धि नाश किस प्रकार होता है? 139
131. बुद्धि के अधीन में काम, क्रोध का सद्उपयोग होना चाहिए। 140
132. सभी में भगवान होने पर भी सभी लोग भगवान नहीं हैं। 141
133. हम किसकी साधना करते हैं। 142
134. शांति लाभ का गुह्य रहस्य। 143
135. आत्मज्ञान के अलावा सभी ज्ञान अज्ञान हैं। 144
136. भक्ति की सीमाबद्धता को समझना आवश्यक है। 145
137. साधन जीवन के तीन महाशत्रु। 146
138. हम लोगों में अज्ञान ज्ञान का रूप लेकर कार्यरत है। 147
139. जगत आपेक्षिक/परिवर्तनशील है यह जानते हुये भी हम उसके अनुसार व्यवहार नहीं करते। 148
140. अचेतन तथा चेतन भेद से स्थिरता दो प्रकार की होती है। 149
141. ईश्वर दर्शन का गूढ़ रहस्य। 150
142. शीघ्र सिद्धि लाभ करने का उपाय। 151
143. सृष्टा की दृष्टि से कोई वैषम्य/भेद नहीं हैं 152
144. प्रणाम करना तथा आशीर्वाद लेना दोनों ही योग साधना को इंगित करते हैं। 153
145. व्यक्ति चेतना की निरपेक्षता ही चैतन्य लाभ का उपाय है। 154
146. हमने जिस सम्भावना की सृष्टि की है। वही हमारे साथ घटित हो रहा है। 155
147. निरपेक्षता को नहीं जानने के कारण ही हम विभिन्न तरह के अभियोगों का सृजन करते हैं। 156
148. जगत में कैसे चलना चाहिए? 157
149. सत्य का पूर्ण परिचय। 158

150. हम जगत में रहते तो हैं किन्तु जगत के नियम से अनभिज्ञ हैं। 159
151. जिसका जो स्वभाव है। वह उसी में सिद्ध है। 160
152. साधना में शरणागति एवं पुरूषाकार दोनों की आवश्यकता है। 161
153. सिद्धलाभ में साधना का संस्कार भी बन्धन कारक है। 162
154. वाह्य त्याग भी बन्धन का कारण है। 163
155. निरपेक्ष न रहने से सत्य समझ में नहीं आता है। 164
156. साधारण, साधक, सिद्ध/योगी/अवधूत तथा सिद्ध के सिद्ध/गुरू के गुरू का अवस्थान। 165
157. आस्तिक एवं नास्तिक दोनों ही स्थितियों से सत्य निरपेक्ष है। 166
158. दबाव सहन करने का समर्थ तथा असमर्थ होने का रहस्य। 167
159. जीवात्मा और परमात्मा का परिचय एवं अवस्थान। 168
160. अज्ञात कारणों से ही हम मृत्यु से डरते हैं। 169
161. यथार्थ स्वजन का संधान। 170
162. हम दर्शक/साक्षी होते हुये भी दृश्य बने हुये हैं। 171
163. पूर्ण से पूर्ण निकलने पर भी पूर्ण ही अवशिष्ट रहता है। 172
164. लाखों साधकों में कोई एक मुक्त होता है। 173
165. विषय त्याग नहीं चिन्ता त्याग करना मूल है। 174
166. ईश्वर को पुकारने के साथ-साथ हमें अपने अवस्थान को भी समझना होगा। 175
167. ईश्वर और व्यक्ति के दूरत्व का रहस्य। 176
168. आध्यात्मिक जीवन में किस प्रकार चलना चाहिए? 177
169. "मैं" (आत्मा) स्वरूप को नहीं जानना ही मानव की मौलिक अज्ञानता है। 178
170. गुरू कृपा बिना साधना वृथा है। 179
171. वाह्य जगत में सभी कुछ आसक्ति एवं विरक्ति का खेल है। 180
172. आसक्ति एवं अहंकार से मुक्त होना सरल नहीं है। 181
173. बद्ध एवं मुक्त पुरूषों में सुख का स्वरूप। 182
174. अपनी चेतना से प्रेम करना/युक्त होना ही भगवान कृष्ण से प्रेम करना है। 183
175. भगवान के साथ अपनत्व होना मुक्ति से भी श्रेष्ठ है। 184

176. ज्ञान के अस्तित्व एवं स्पन्दन को नहीं समझने से ज्ञान वृथा हो जाता है। 185

177. चैतन्य दर्शन – 186
01 चिन्ता का सूत्र।
02 चेतना का सूत्र।
03 चैतन्य का सूत्र। 195

178. परिशिष्ट–:
01 विशिष्ट उपदेश।
02 शिवसूत्र तथा शक्तिसूत्र की व्याख्या।